अनुवाद

इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि इस काम के निवास हैं। इनके द्वारा यह जीवात्मा के यथार्थ ज्ञान को ढक कर उसे मोहित करता है।।४०।।

तात्पर्य

शत्रु ने देहबद्ध जीवात्मा के शरीर में सभी सामरिक महत्त्व के स्थलों पर अधिकार कर लिया है। भगवान् श्रीकृष्ण उन स्थानों का संकेत कर रहे हैं, जिससे शत्रु-दमन का अभिलाषी उसके निवासस्थानों से अवगत हो जाय। सम्पूर्ण इन्द्रिय क्रियाओं का केन्द्र मन है। यह मन ही इन्द्रियभोग के सब विचारों का आगार है। यही कारण है कि इन्द्रियाँ काम को निवास देती हैं। इससे आगे बुद्धि इन कामोन्मुखी प्रवृत्तियों की राजधानी बन जाती है। बुद्धि आत्मा की निकट पड़ोसी है। इसलिए कामांध बुद्धि के प्रभाव में आकर आत्मा भी मिथ्या अहंकार के वश में प्रकृति, मन तथा इन्द्रियों से तादात्म्य कर लेता है। इन्द्रियतृप्ति में आसक्त जीवात्मा भ्रमपूर्वक इसी को सच्चा सुख मान बैठता है। देह में जीव की इस मिथ्या आत्मबुद्धि का श्रीमद्भागवत में अति उत्तम वर्णन है—

यस्यात्मबुद्धिः कुणापे त्रिधातुके स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्यधीः।।
यत्तीर्थबुद्धिः सलिले न कर्हिचिज्जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः।।

'जो मनुष्य इस त्रिधातु-निर्मित देह में आत्मबुद्धि रखता है; देहजन्य विकारों को स्वजन समझता है; जन्मभूमि को पूज्य मानता है और भक्तों का सत्संग करने के उद्देश्य को न लेकर, केवल स्नान करने के लिए तीर्थ यात्रा करता है, वह गधे या गाय के तुल्य है।'

20/3

तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ।
पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम्।।४१।।

तस्मात्=इसलिये; **त्वम्**=तू; **इन्द्रियाणि**=इन्द्रियों को; **आदौ**=सबसे पहले; **नियम्य**=वश में करके; **भरतर्षभ**=हे भरतश्रेष्ठ; **पाप्मानम्**=महापापमय; **प्रजहि**=मार; **हि**=निःसन्देह; **एनम्**=इस; **ज्ञान**=ज्ञान; **विज्ञान**=शुद्ध आत्मविज्ञान का; **नाशनम्**=नाश करने वाले।

अनुवाद

इसलिए हे भरतश्रेष्ठ अर्जुन! पहले इन्द्रियों को वश में करके फिर ज्ञान-विज्ञान का नाश करने वाले इस महापापमय काम को मार।।४१।।

तात्पर्य

श्रीभगवान् ने अर्जुन को गीता के प्रारम्भ से ही इन्द्रियसंयम करने का आदेश दिया है, जिससे वह आत्मजिज्ञासा और आत्मज्ञान का विनाश करने वाले महापापमय शत्रु—काम का दमन करने में समर्थ हो जाय। **ज्ञान** का अर्थ है, आत्मा तथा अनात्मा के भेद का बोध, अर्थात् देह से आत्मा की भिन्नता का बोध। **विज्ञान** का तात्पर्य आत्मा का विशिष्ट ज्ञान, स्वरूप का बोध और श्रीभगवान् से अपने सम्बन्ध